लाल किला कैसे बना?

महेश्वर दयाल

शाहजहाँ को मुमताज महल से बहुत प्यार था। आगरे का ताजमहल उसकी मुहब्बत की निशानी है। मुमताज महल की जुदाई ने शाहजहाँ की सारी खुशियाँ छीन ली थीं। बादशाह आगरे के किले से ताजमहल को देखता तो प्यारी बेगम की याद दिल को तड़पा देती। वह हर वक्त उदास रहने लगा था। आगरे की गर्मी और घुटन से भी वह परेशान हो गया था। और अब आगरे में इतनी जगह भी न बची थी कि वह मनपसन्द की नई-नई इमारतें बना सके। शाहजहाँ का दिल जब हर तरफ से उचाट हुआ तो उसने दिल्ली को अपनी राजधानी बनाने की ठान ली।

मुकर्रमत खाँ मीर इमारत को हुक्म मिला कि दिल्ली में बादशाह के लिए एक शानदार लाल पत्थर का किला बनाने के लिए कोई अच्छी जगह तलाश की जाए। लेकिन यह काम आसान न था। उन दिनों फीरोजशाह तुगलक की बसाई दिल्ली उजाड़ पड़ी थी। शाहजहाँ के राज से लगभग ढाई सौ बरस पहले की बात है। फीरोजशाह तुगलक ने अपना कोटला तो जमुना के किनारे बनाया था लेकिन उस की बसाई हुई दिल्ली दूर-दूर फैली हुई थी। फीरोजशाह कोटला के सामने अँग्रेज़ों ने कब्रों और खण्डहरों को तोड़ नई दिल्ली बसाई थी। यह बेहद घनी आबादी वाला इलाका था। फीरोजशाह तुगलक के मरने के बाद मुगलों के सरदार अमीर तैमूर लंग ने दिल्ली को बुरी तरह उजाड़ा। सैयद, लोदी, सूरी और मुगल बादशाह हुमायूँ की बसाई दिल्लियों में वह पहली-सी रौनक और चहल-पहल न बची।

शहंशाह अकबर दिल्ली न आए और आगरे जा बसे थे। शाहजहाँ के इमारत बनवाने वालों को इस खण्डहरों भरी दिल्ली में किला बनाने के लिए एक अच्छी खुली जगह मिलनी मुश्किल हो गई। बहुत खोज के बाद मुकर्रमत खाँ को तालकटोरा बाग और उसके आसपास की जगह पसन्द आई। वहाँ पानी की भी कमी न थी

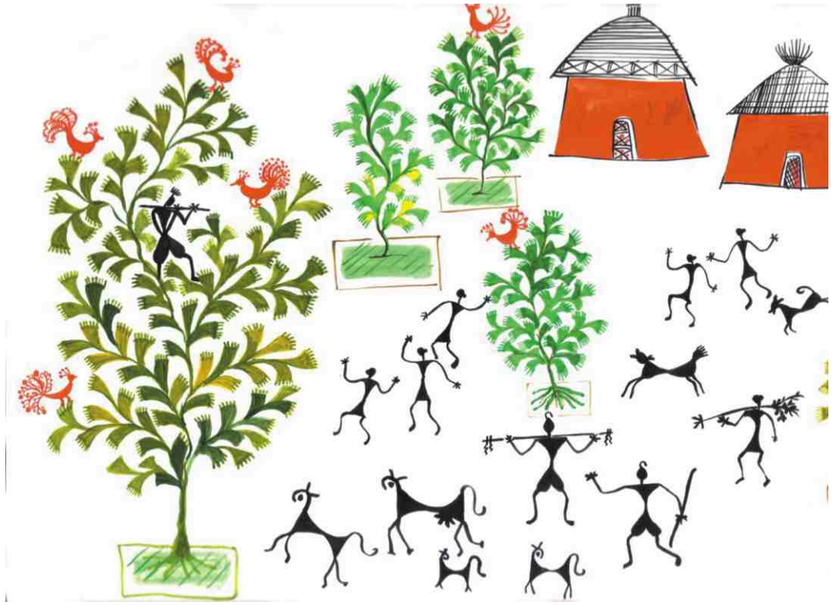

और हर तरफ हरियाली ही हरियाली थी। मीर इमारत ने किला बनवाने के लिए दिल्ली के दो मशहूर कारीगरों को बुलवाया। उनके नाम उस्ताद हामिद और उस्ताद हीरा थे। इन दोनों को लाल पत्थर का किला बनाने का काम सौंपा गया। दोनों उस्तादों ने तालकटोरा और उसके आसपास की जगह को लाल पत्थर की इमारत के लिए ठीक न समझा। उनका कहना था कि गर्मियों में ताल सूख जाएगा और पानी की कमी होगी। किले की खाई में पानी भरने में कठिनाई आएगी। उन्होंने एक बुराई यह भी बताई कि यहाँ की ज़मीन में शोरा बहुत होने से लाल पत्थर को नौनी लग जाएगी। शोरे से पत्थर में बाल पड़ जाएँगे और पत्थर चटक जाएँगे।

इन उस्तादों ने दिल्ली में जमना के किनारे शेरशाह सूरी के बेटे सलीम शाह के बनाए सलीमगढ़ के पास खुली जगह पर एक किला बनाने की राय दी। यहाँ की धरती में शोरा नाम को न था। सैकड़ों बरस से जमना इस किनारे को धोती चली आ रही थी। यहाँ पत्थर को नोनी लगने का डर न था। उस्ताद हामिद और उस्ताद हीरा की राय में यह जगह इसलिए भी ठीक थी कि अगर किले के शाही महलों को जमना की तरफ बनाया गया तो महलों में ठण्डक भी खूब रहेगी। जमना के किनारे यहाँ कोई और अड़चन भी न थी। बस, बंजारों ने बहुत दिनों पहले से अपना पड़ाव बना रखा था। जब कभी भी बंजारे किश्तियों में नाज भर कर दिल्ली लाते तो इस मैदान में सुस्ताने के लिए टेकी जमाते थे। उन्होंने अपने आराम के लिए यहाँ पर बहुत बड़ा कुआँ भी खोद लिया था। इसका पानी बहुत मीठा, हल्का और साफ था। यह वही कुआँ है जिसे दिल्ली वालों ने "बंजारी कुआँ" के नाम से याद किया। उस्ताद हामिद और उस्ताद हीरा की बताई इस जगह को सबने पसन्द किया और शाहजहाँ को इस बात की खबर आगरे भेज दी गई।

कहते हैं, शाहजहाँ भी एक दिन इस जगह को देखने के लिए आगरे से शिकार खेलता हुआ यहाँ आ आ पहुँचे। गर्मी के दिन थे। बादशाह को प्यास लग रही थी। उसे जमना के किनारे एक ब्राह्मण की कुटिया दिखाई दी। उसने घोड़े को ऐड़ लगाई और अपने साथियों को छोड़ घोड़ा दौड़ाता, ब्राह्मण की कुटिया में आ पहुँचा। और पीने के लिए पानी माँगा। ब्राह्मण ने अपनी लुटिया में पानी भरा और प्यासा बादशाह ओक लगाकर जल्दी-जल्दी पानी पीने लगा। भोले ब्राह्मण ने इस अनजान थके मुसाफिर का बेसबरापन देखकर पानी की धार धीमी करने के लिए अपनी लुटिया में थोड़ी घास डाल दी। शाहजहाँ ने ब्राह्मण से कारण पूछा। इस पर ब्राह्मण ने रूखेपन से जवाब दिया, "कुछ भी नहीं। बस वही कर रहा हूँ जो अपने बैलों के साथ करता हूँ। वे जब खेत से हारे-थके आते हैं, तो मैं उन्हें ऐसे ही पानी पिलाता हूँ कि उन का पेट न फट जाए।" ब्राह्मण की बात सुनकर बादशाह झेंप गया और धीरे-धीरे पानी पीने लगा। इतनी देर में बादशाह के साथी भी वहाँ आ पहुँचे। ब्राह्मण उन्हें अपनी कुटिया में आते देखकर डर गया। उसका माथा ठनका, "हो न हो, यह पानी पीने वाला ज़रूर कोई बड़ा आदमी है।" वह शाहजहाँ के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। लेकिन शाहजहाँ ने ब्राह्मण से कुछ न कहा। उसकी पीठ थपकी और उसे कुछ अशर्फियाँ देकर चल पड़ा।

शाहजहाँ अभी थोड़ी ही दूर गया होगा कि उसने एक पेड़ पर बैठी चिड़िया को एक बाज़ को ठोंगे मारते देखा। शाहजहाँ ऐसी अनहोनी बात देखकर अचम्भे में पड़ गया। उसने सोचा कि शायद यह बाज़ घायल या बीमार है तभी चिड़िया से मार खा रहा है। उसने अपने एक साथी को इस बात की जाँच करने के लिए पेड़ पर चढ़ने का हुक्म दिया। ज्यों ही शाहजहाँ का साथी पेड़ पर चढ़ा, बाज़ और चिड़िया उड़ गए। पेड़ पर चढ़े साथी ने कहा, "हुज़ूर, यहाँ छोटी-सी चिड़िया अपनी

जान पर खेलकर अपने नन्हे बच्चों की जान बचाने की कोशिश कर रही थी। बच्चे बाज़ से डरकर घोंसले में फड़फड़ा रहे थे।" यह सुनकर बादशाह के एक और साथी ने हँसकर कहा, "आलमपनाह, मालूम होता है दिल्ली के पानी में कुछ बात है। यहाँ के रहने वाले आदमी तो क्या जानवर भी यहाँ का पानी पीकर हठीले और सरफिरे हो जाते हैं।" शाहजहाँ ने इस बात का कोई जवाब न दिया और चुपचाप आगरा लौट आया। उसने दिल्ली में जमना के किनारे किला बनाने का हुक्म जारी कर दिया।

बादशाह के हुक्म मिलने की देर थी कि नींव खुदनी शुरू हो गई। धौलपुर से लाल पत्थर आने लगा और हिन्दुस्तान के सब राजों-महाराजों और अमीरों ने भी अपने बादशाह के किले की इमारत के लिए माल-मसाला भेजना शुरू कर दिया। किले की बुनियादें जब खुद चुकीं तो उस्ताद हामिद और उस्ताद हीरा न जाने कहाँ जा छिपे और किले का काम रुक गया। दोनों कारीगरों को हर जगह ढुँढवाया, पर उन का कहीं पता न चला। आखिर में, मीर इमारत ने तंग आकर इस बात की शिकायत बादशाह से कर दी। दोनों उस्तादों की गिरफ्तारी का हुक्म हो गया। एक दिन उस्ताद हामिद और उस्ताद हीरा आप ही आप आगरे में बादशाह के दरबार में हाज़िर हो गए और गुस्ताखी की माफी चाही।

इन दोनों ने बादशाह से हाथ जोड़कर अर्ज़ किया कि जहाँपनाह हम बेकसूर हैं। हम आपके नमकखार और वफादार बन्दे हैं। हम नहीं चाहते थे कि आप के किले की इमारत किसी तरह भी बोदी रह जाए और हम आपके ये नाचीज़ बन्दे बेईमान और नमकहराम ठहराए जाएँ। उन्होंने कहा कि हमने नीवों को इसलिए खुला छोड़ा कि इनको हर मौसम की हवा लग जाए। गर्मी आई, बरसात पड़ी, जाड़ा आया, नीवों को जहाँ से झूमना था झूमीं, भीगना था भीगीं, सिकुड़ना था सिकुड़ीं – जो कुछ होना था हो लिया। किले की इमारत को अब कोई जोखिम नहीं। नीवों की भराई का काम पूरा होने पर आन की आन में किला तैयार हो जाएगा। मालिक ने चाहा तो दिल्ली का लाल किला ऐसा बनेगा कि हज़ारों बरस तक इसकी इमारत को ठेस न आने पाएगी। और ऐसा मालूम होगा जैसे लाल किला अभी बनकर तैयार हुआ है।

शाहजहाँ के मन को इन कारीगरों की बात सच लगी और उसे भूली हुई वही ब्राह्मण, चिड़िया और बाज़वाली बात याद आ गई। वह सोचने लगा कि इन कारीगरों को भी चाहे कोई कितना ही हठीला और सिरफिरा कहे लेकिन मन के अच्छे ही नहीं, निडर और दिलेर भी हैं। बादशाह के दरबार में भी ये अपनी बात कहने से न तो हिचकिचाए और न अपनी जान की ही परवाह की। शाहजहाँ ने इनकी साफगोई और ईमानदारी की दाद दी। बहुत-सा इनाम दिया तथा रहने के लिए हवेलियाँ भी। दिल्ली में जामा मस्ज़िद के पास बड़े दरीबे के बाहर उस्ताद हामिद और उस्ताद हीरा नाम के कूचे, जिन में उन की हवेलियाँ थीं, आज भी मौजूद हैं।

शाहजहाँ ने तो अपना किला तालकटोरे और आसपास की जगह न बनाया, लेकिन अँग्रेज़ों ने जब नई दिल्ली बसाई तो तालकटोरे के एक हिस्से में और रायसीना की पहाड़ी पर वॉयसरॉय के रहने का मकान और उसके अफसरों की कोठियाँ बना दीं। यह वही जगह है जहाँ आजकल राष्ट्रपति भवन और कुछ अफसरों और मंत्रियों की कोठियाँ भी हैं। अँग्रेज़ों को इस जगह इमारत बनाने में कोई कठिनाई न आई। शोरे और नमी को दूर

चित्रः अनीता सक्सेना

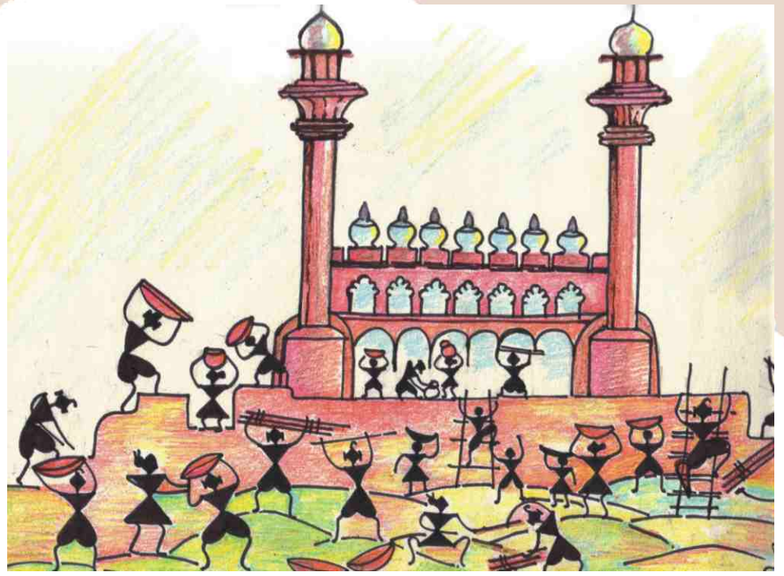

करने के लिए उन्होंने बिलकुल नए तरह के सीमेण्ट की तह नीवों में जमाई और वे यहाँ नलों से पानी भी ले आए।

शाहजहाँ का दिल्ली का लाल किला नौ बरस में तैयार हुआ। उसने सबसे पहले किला बनाने का काम इज़्ज़त खाँ को सौंपा था। उसने पाँच महीने, दो दिन में नीवें भरवा दीं। और जब इज़्ज़त खाँ को सिंध जाना पड़ा तो इस काम की देखभाल अल्लावरदी खाँ ने की। उसने दो बरस, एक महीना, चौदह दिन में किले की बारह गज ऊँची चारदीवारी उठवा दी। चारदीवारी के ऊपर बड़े सुन्दर कँगूरे बनाए गए। किले में तीन बहुत चौड़ी और गहरी खाइयाँ खोदी गईं। इनमें जमना का पानी लाया गया। उन दिनों जमना की दो धाराएँ बहती थीं। एक धारा लाल किले और सलीमगढ़ के बीच से और एक थोड़ी दूर परे हटकर। खाई में पानी किले के पासवाली धारा से डाला गया। किले में जाने के लिए शहर की तरफ दो बड़े-बड़े ऊँचे दरवाज़े बनवाए और किले की दीवार में दरिया की तरफ भी दरवाज़े रखे गए। किले के चाँदनी चौक की तरफ वाले दरवाज़े को लाहौरी दरवाज़ा और फैज़ बाज़ार की तरफ वाले दरवाज़े का नाम दिल्ली दरवाज़ा रखा गया। दिल्ली की फसील और किले की दीवार में जो दरवाज़े किसी शहर के नाम पर थे, इन दरवाज़ों से होकर उन शहरों की तरफ बाहर जाया जाता था। जैसे लाहौरी दरवाज़े से लाहौर की तरफ, काबुली दरवाज़े से काबुल की तरफ, कलकत्ती दरवाज़े से कलकत्ते की तरफ, कश्मीरी दरवाज़े से कश्मीर की तरफ। लेकिन शाहजहाँ का बसाया हुआ शहर दिल्ली नहीं, "शाहजहाँनाबाद" कहलाता था। दिल्ली तो उस बस्ती का नाम था जो शहर की फसील के बाहर बसती थी। इसीलिए शाहजहाँनाबाद से दिल्ली दरवाज़े नामक दरवाज़े से होकर ही दिल्ली जाया जाता था। काबुली दरवाज़े और कलकत्ती दरवाज़े का तोड़कर अँग्रेज़ों ने एक सड़क निकाली थी। लेकिन लाहौरी दरवाज़े को मुगलों के आखिरी बादशाह ने तुड़वा दिया था। कहते हैं इस दरवाज़े को बहादुर शाह ने इसलिए तुड़वाया था क्योंकि उसका बड़े डीलडौल वाला मौलाबख्श नाम का हाथी हौदे समेत इससे नहीं निकल सकता था। इससे बहादुर शाह उस पर सवार होकर ईदगाह तक नहीं जा सकता था।

किले के लाहौरी दरवाज़े के सामने एक दीवार है जिसे घूगस या घूँघट की दीवार कहते हैं। यह वही दीवार है जहाँ खड़े होकर हर साल 15 अगस्त को भारत के प्रधानमंत्री राष्ट्र-ध्वज फहराते हैं। इस घूँघट की दीवार को औरंगज़ेब ने इसलिए बनवाया था ताकि किले का लाहौरी दरवाज़ा दुश्मनों की आँख से बचा रहे और किले में आने वालों को कोई तकलीफ न हो। बात यह थी कि बादशाह के दरबारी जब चाँदनी चौक से किले में जाते थे, तो दीवाने आम का तख्त उनके सामने पड़ता था और उन्हें बादशाह और उसके तख्त का अदब करने के लिए उतरकर पैदल चलना होता था और सलामें झुकानी पड़ती थीं। इसलिए उसने लाहौरी दरवाज़े के आगे दीवार खिंचवाई। शाहजहाँ को यह खबर आगरे की कैद में मिली, तो उसने बेटे को प्यार भरे खत में लिखाः

"ऐ फर्जदे अर्जमन्द, तुमने किले को घूँघट निकाला। हम तुमसे बहुत खुश हुए।"

दिल्ली का लालकिला जब हर तरफ से सज-सजाकर तैयार हुआ तो शाहजहाँ आगरे से दिल्ली आया और कला-महल में ठहरा। यह महल लाल किला बनने से पहले बादशाह के ठहरने के लिए बनाया गया था। कलां महल का एक हिस्सा दिल्ली के चितली कब्र के मुहल्ले से ज़रा आगे चलकर आज भी मौजूद है, लेकिन महल क्या है, टूटा-फूटा खण्डहर।

किले में दाखिल होने के लिए शाहजहाँ ने नजूमियों और ज्योतिषियों से शुभ घड़ी निकलवाई। बादशाह की सवारी बड़ी धूमधाम और ठाठबाट से किले में दाखिल हुई। जितनी देर शाहजहाँ की सवारी चलती रही, उसका बड़ा और लाड़ला बेटा दाराशिकोह उस पर चाँदी और सोने के फूल न्यौछावर करता रहा।

साभार : *दिल्ली मेरी दिल्ली*